E-ISSN: 2664-603X
P-ISSN: 2664-6021
IJPSG 2025; 7(6): 168-172
www.journalofpoliticalscience.com
Received: 20-05-2025
Accepted: 21-06-2025

नीरज कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर पी.जी.राजनीति विज्ञान विभाग, जय प्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा, बिहार, भारत।

Corresponding Author:
नीरज कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर पी.जी.राजनीति विज्ञान विभाग, जय प्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा, बिहार, भारत।

महात्मा गांधी का राजनीतिक दर्शन : एक विश्लेषण

नीरज कुमार

DOI: https://www.doi.org/10.33545/26646021.2025.v7.i6b.589

सारांश
महात्मा गांधी का राजनीतिक दर्शन सत्य और अहिंसा पर आधारित है। वह नैतिकता को राजनीति का विभाज्य अंग मानते हैं। वे ऐसे लोक कल्याणकारी राज्य का निर्माण करना चाहते है, जिसमें आम जनता केंद्र में हो । वह स्थानीय स्वशासन के समर्थक हैं। जिसमें आम नागरिक की अधिक से अधिक भागदारी हो। शासन और राजनीति का ऐसा स्वरूप हो जो नागरिकों को अधिक स्वतंत्रता प्रदान करें और उनके मध्य समानता स्थापित करे।

कुटशब्दः सत्य, स्वराज्य, विकेन्द्रीकरण, स्थानीय शासन, कर्तव्य ।

प्रस्तावना
महात्मा गांधी विश्व के प्रभावशाली विचारों में से हैं, जिन्होंने मानवीय जीवन के हर पक्ष को अपने विचार और दर्शन से प्रभावित किया है। उनके विचार प्रभावशाली तथा उपयोगी है। दक्षिण अफ्रिका से वापस आने के बाद वे सक्रिय राजनीति में नहीं आना चाहते थे। पर अपने राजनीतिक गुरू गोपाल कृष्ण गोखले के कहने पर वे राजनीति में आए। उनका कहना था कि राजनीति ने हमें सांप की तरह चारों तरफ लपेट कर रखा है। अतः हम उससे बच नहीं सकते है। राजनीति हमारे जीवन का अभिन्न और अनिवार्य हिस्सा है। प्रायः राजीनति को सत्ता संघर्ष और सत्ता व शक्ति प्राप्त करने का साधन माना जाता है। पर उनके अनुसार राजनीति का अलग अर्थ था। उनको राजनीति को देखने व परखने का दृष्टिकोण अलग है। उनके राजनीतिक दर्शन का वर्णन इस प्रकार है–

1. राजनीति और नैतिकता
सत्य और अहिंसा गांधी जी के विचारों की धुरी रही है। इसलिए ये आदर्श प्रायः उनके दर्शन में देखने को मिलता है। मैकियावेली जैसे विचारक राजनीति और नैतिकता को अलग–अलग रखने के पक्षधर है। मैकियावेली ने यह विचार दिया कि अपने राजनीतिक लक्ष्य प्राप्त करने के लिए नैतिकता का पालन करना अनिवार्य नहीं है। परन्तु गांधी जी ने राजनीति को धर्म से अलग करके कभी नही देखा। गांधी जी के जीवन का महान उद्देश्य राजनीति में नैतिकता को प्रतिष्ठित कर उसमें क्रान्तिकारी परिवर्तन लाना था।[1]

उनके जीवन का लक्ष्य मानवता की सेवा करना तथा जनमानस की समस्याओं को दूर करना था। गांधी जी के अनुसार–''ईश्वर साक्षात्कार के लिए मैं बड़े से बड़ा बलिदान भी दे सकता हूँ। मेरी सामाजिक, राजनैतिक, नैतिक और सेवा–सम्बन्धी सभी प्रवृत्तियाँ उसी एक लक्ष्य की ओर अभिमुख है। मुझे यह अनुभूति हो चुकी है कि भगवान दुखियों के बीच ही रहते है, इसलिए शोषित एवं संत्रस्त व्यक्तियों के लिए मेरे हृदय में इतनी करूणा है। चूँकि मैं राजनीति में हिस्सा लिए बिना इस प्रकार की सेवा नही कर सकता, इसलिए मैं उनके लिए इस राजनीति में हूँ। इस तरह राजनीति के माध्यम से मैं दुःखी भारत के लिए और उसके द्वारा विश्व मानवता के लिए संघर्षरत हूँ।[2] उपरोक्त कथन से यह स्पष्ट है कि गांधी जी ने राजनीति और धर्म को अलग–अलग करके कभी नही देखा। जिस प्रकार धर्म व्यक्ति के व्यक्तिगत जीवन को परिपूर्ण करता है, उसी प्रकार यह सार्वजनिक जीवन को भी परिपूर्ण करता है क्योंकि गांधी जी की मान्यता थी कि व्यक्तिगत एवं सार्वजनिक जीवन में एकरूपता ही राजनीति की नैतिकता को प्रबल करती है।[3] गांधी जी धार्मिक व्यक्ति थे तथा उन्होंने धर्म को इस तरह आत्मसात कर लिया था कि जीवन का कोई भी पहलु अछुता नहीं रहा। इसलिए राजनीति भी इसका अपवाद नहीं है। गांधी जी के अनुसार–''मैं धर्म से भिन्न राजनीति की कल्पना नही कर सकता। वास्तव में धर्म तो हमारे हर एक कार्य में व्याप्त होना चाहिए। यहां धर्म का अर्थ कट्टर पंथ से नहीं है। उसका अर्थ है, विश्व की एक नैतिक सुव्यस्था में श्रद्धा।[4]

मैं देश की आँखों में धूल न झोंकूँगा। मेरे नजदीक धर्म विहीन राजनीति कोई चीज़ नहीं है। नीति शून्य राजनीति सर्वथा त्याज्य है।[5] गांधी जी ने धर्म और राजनीति के मध्य अन्तः सम्बन्ध को आवश्यक मानकर उसे धर्म व नैतिकता के रूप में परिभाषित किया एवं राजनीति को भी मानवकल्याण का साधन माना।[6] उनके विचार में, ''धर्महीन राजनीति मृत्यु का एक ऐसा पिंजरा है जो आत्मा की हत्या कर देता है।''[7] राजनीति जीवन के प्रायः सभी अंगों को स्पर्श करती है। अतः इसे स्वस्थ एवं शुद्ध रखना और भी जरूरी है। लेकिन सिद्धान्तहीन और नैतिकता विहीन राजनीति अभिशाप है। यही कारण है कि विनोबा जी विज्ञान से राजनीति एवं राजनीति स्वार्थ को अलग रखने की दृष्टि से ''राजनीतिविज्ञान''त्रसर्वनाश कहा है। श्री रामचरित मानस में भी इसका समर्थन है–''राजनीति बिनु धन बिनु धर्मा। हरिहि समर्पे बिनु सतकर्मा।। मुहम्मद इकबाल ने भी नैतिकता विहीन राजनीति की भर्त्सना की है–''जुदा हो दीन सियासत से रह जाती है चंगेजी।[8] राजनीति आज सब पर प्रभावी है–''सर्वे धर्मा राजधर्मा निमग्नाः।'' चाहे विज्ञान की दिशा निर्धारित करनी हो, युद्ध का बिगुल फूकना हो, अन्तर्राष्ट्रीय उधोग–व्यापार के आयाम तय करने हो, जहाँ तक शिक्षा एवं धर्म संघो की नीति निर्धारित करनी हो, राजनीति हर जगह हावी है। लेकिन जब वही नैतिकता विहीन एंव सिद्धान्तहीन हो जाये तो क्या होगा?[9]

आज अनेक समस्याओं का उचित व कारगर हल इसलिए नहीं निकल पा रहा है कि राजनीति में नैतिकता का स्तर लगातार गिरता जा रहा है। पर्यावरण संरक्षण, निःशस्त्रीकरण, गरीबी कम करना, भ्रष्टाचार जैसी समस्याएं नैतिकता विहिन राजनीति के कारण नही हल हो पा रही है।

2. साधन की पवित्रता

गांधी जी नैतिकता युक्त राजनीति के प्रबल समर्थक थे। इसलिए उन्होंने साध्य के लिए प्रयोग होने वाले साधन की पवित्रता पर जोर दिया। यथार्तवादी विचारक यह मान लेते है कि यदि साध्य उचित है तो साधन को स्वयं उचित मान लिया जाएगा। हिन्द स्वराज्य में उन्होंने लिखा है कि–''आप मानते है कि साधन और साध्य जरिया और मुराद के बीच कोई सम्बन्ध नहीं है। यह बहुत बड़ी भूल है। इस भूल के कारण जो लोग धार्मिक कहलाते है, उन्होंने घोर कर्म किए हैं। यह तो धतूरे का पौधा लगाकर मोगरे के फूल की इच्छा करने जैसा हुआ। मेरे लिए समुद्र पार करने का साधन जहाज ही हो सकता है। अगर मैं पानी में बैलगाड़ी डाल दूँ, तो वह गाड़ी और मैं दोनों समुद्र के तले पहुँच जायेंगे। जैसे देव वैसी पूजा–यह वाक्य बहुत सोचने लायक है। उनका गलत अर्थ करके लोग भुलावे में पड़ गये है। साधन बीज है और साध्य–हासिल करने की चीज–पेड़ है। इसलिए जितना सम्बन्ध बीज और पेड़ के बीच है, उतना ही साधन और साध्य के बीच है, शैतान को भजकर मैं ईश्वर–भजन का फल पाऊँ, यह कभी हो ही नहीं सकता। इसलिए यह कहना कि हमें तो ईश्वर को ही भजना है, साधन भले शैतान हो, बिल्कुल अज्ञान की बात है। जैसी करनी वैसी भरनी।[10]

3. राज्य का स्वरूप–

भारत में तथा भारत से बाहर जहाँ भी गांधी जी ने आम लोगों के अधिकार व स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष किया, वहां पर राज्य द्वारा अनेक रूकावटे डाली गयी तथा संघर्ष को ताकत के द्वारा दबाने का प्रयास किया। इसलिए वे राज्य के पक्ष में नहीं थे। उन्होंने सत्य और अहिंसा पर आधारित राज्यहीन समाज की कल्पना की। उनका मानना था कि रामराज्य में जनता का स्वैच्छिक सहमति पर आधारित होगा। लोग अपनी आवश्यकताएं स्वयं पूर्ण कर लेंगे। इसमें हिंसा, सत्ता, शक्ति का कोई स्थान नहीं होगा। गांधी जी का आदर्श राज्य पूर्णतः आत्म नियन्त्रित होगा। उनके अनुसार इस राज्य में प्रत्येक व्यक्ति अपना शासक खुद होगा। इसमें व्यक्ति इस प्रकार अपने कार्य करेगा की उसके पड़ोसी को उसके कार्य से काई समस्या नहीं होगी। गांधी जी राज्य की बढ़ती शक्ति से परेशान थे। राज्य की जितनी शक्ति बढ़ेगी, व्यक्ति का अस्तिव राज्य के सामने उतना ही बौना होता जाएगा। राज्य हिंसा पर टिका है तथा उसके पास आत्मा नहीं है। परन्तु मानव में आत्मा होती है। राज्य हिंसामूलक है, चाहे वह कितना भी लोकतांत्रिक क्यों न हो। प्रत्येक राज्य निर्धन व्यक्ति की आत्मा का शोषण करता है। राज्य हिंसा का प्रतीक होने के कारण आत्माविहीन यंत्र के समान है। व्यक्ति की आत्मा होती है, किंतु आत्माविहीन राज्य हिंसा पर अवलंबित होने के कारण व्यक्ति का शोषण ही करेगा।[11] इस प्रकार गांधी की दृष्टि में राज्य की सत्ता कंस के समान अत्याचारी व हिंसामूलक है। इसलिए उनकी कल्पना का स्वराज्य अराजकतावादियों की तरह शासनविहिन होने के साथ–साथ पूर्ण अहिंसक भी होगा।[12]

4. स्वराज्य

राजशाही तथा अंग्रेजी शासन के विपरीत गांधी जी ने स्वराज्य की कल्पना की थी। गांधी जी शब्दों में–''स्वराज्य की मेरी कल्पना के विषय में किसी को कोई गलतफहमी नहीं होनी चाहिए। उसका अर्थ विदेशी नियंत्रण से पूरी मुक्ति और पूर्ण आर्थिक स्वतंत्रता है।''[13] गांधी जी विदशी ही नहीं, स्वदेशी सरकार से भी मुक्ति की कामना करते थे। उनके अनुसार–''स्वराज्य का अर्थ है सरकारी नियन्त्रण से मुक्त होने के लिए लगातार प्रयत्न करना, फिर वह नियंत्रण विदेशी सरकार का हो या स्वदेशी सरकार का। यदि स्वराज्य हो जाने पर लोग अपने जीवन की हर छोटी बात के नियमन के लिए सरकार का मुँह ताकना शुरू कर दें, तो वह स्वराज्य–सरकार किसी काम की नहीं होगी।''[14] गांधी जी के अनुसार स्वराज्य में सबके साथ समानता का व्यवहार होगा। गांधी जी के अनुसार–''पूर्ण स्वराज्य.. .... कहने में आशय यह है कि वह जितना किसी राजा के लिए होगा उतना ही किसान के लिए, जितना किसी धनवान जमींदार के लिए होगा उतना ही भूमिहीन खेतिहर के लिए, जितना हिन्दुओं के लिए होगा उतना ही मुसलमानों के लिए, जितना जैन, यहूदी और सिक्ख लोगों के लिए होगा उतना ही पारसियों और ईसाइयों के लिए। उसमें जाति–पाति–धर्म अथवा दरजे के भेदभाव के लिए कोई स्थान नहीं होगा।''[15] उन्होंने यह कल्पना की कि स्वराज्य में सभी की आवश्यकताएं पूर्ण होगी। उनके अनुसार–''मेरे सपने का स्वराज्य तो गरीबों का स्वराज्य होगा। जीवन की जिन आवश्यकताओं का उपभोग, राजा और अमीर लोग करते हैं, वही तुम्हे भी सुलभ होनी चाहिए, इसमें फर्क के लिए स्थान नहीं हो सकता।''[16] गांधी जी ने स्वराज्य प्राप्ति के लिए सत्य और अहिंसा का सहारा लेने की सलाह दी। उनके अनुसार ''मेरी कल्पना का स्वराज्य तभी आयेगा जब हमारे मन में यह बात अच्छी तरह जम जाय कि हमे अपना स्वराज्य सत्य और अहिंसा के शुद्ध साधनों द्वारा ही हासिल करना है, उन्ही के द्वारा हमें संचालन करना है और उन्हीं के द्वारा हमें उसे कायम रखना है। सच्ची जनता का स्वराज्य कभी भी असत्यमय और हिंसक साधनों से नही आ सकता।''[17] अहिंसा पर आधारित स्वराज्य में लोगों को अपने कर्तव्य का ज्ञान होना चाहिए। इस अवस्था में लोग दूसरे की भलाई के लिए अपना योगदान देते है। कोई किसी को शत्रु नहीं मानता।

5. विकेन्द्रीकरण

गांधी जी सत्ता के केन्द्रीकरण के विरूद्ध थे। गांधी जी केवल शक्ति का हस्तान्तरण गोरों से कालों के हाथों में नहीं करना

चाहते थे। वे ऐसे स्वराज्य की कामना करते थे, जिसमें अंतिम सत्ता किसानों व श्रमिकों के हाथों में हो। उनके अनुसार, लोकतंत्र का अर्थ विकेन्द्रीकरण द्वारा सत्ता के दुरूपयोग तथा शोषण के विरूद्ध बचाव है।[18] गांधी जी ने शक्ति और हिंसा को प्रभावहीन बनाने के लिए विकेन्द्रीकरण की आवश्यकता पर बल दिया। वह केन्द्रीकरण को पर्याप्त भयावह समझते थे, क्योंकि इसका परिणाम शक्ति का कुछ हाथो में केन्द्रित हो जाना था।[19] विकेन्द्रीकरण के सिद्धान्त का समर्थन गांधीवाद में इस आधार पर किया जाता है कि राजनीतिक सत्ता का केन्द्रीयकरण वर्तमान व्यवस्था में व्यक्ति के विकास के लिए आवश्यक वातावरण में बाधा पहुँचाती है।[20] गांधी जी राजनीतिक केन्द्रीकरण की व्यवस्था को साम्राज्यवाद का ही रूप मानते थे, क्योंकि इसी से अमीर और गरीब के झगड़े पैदा होते है। इसी के कारण शक्ति और सम्पत्ति केन्द्रित हो जाती है, जिससे व्यक्ति की स्वशासन शक्ति का लोप हो जाता है।[21] गांधी के स्वराज में सत्ता का बटवारा परम्परागत पिरामिड की तरह का न होकर, गोलाकार समुद्रीय लहरों का सा होगा। सत्ता व्यक्ति से आरम्भ होकर, ग्राम पंचायत, ब्लाक पंचायत, तहसील पंचायत, जिला परिषद्, प्रांतीय सरकार, केन्द्रीय सरकार तथा विश्व सरकार जैसे कभी न समाप्त होने वाले गोलाकार दायरों में फैलती जायेगी और इनमें से हर दायरा व्यक्ति से आरम्भ ही न होगा, व्यक्ति इन दायरों में से प्रत्येक का आकर्षण केन्द्र भी बना रहेगा, जिसके कल्याण के चरम लक्ष्य पूर्ति के लिए हर दायरा कार्यरत होगा।[22]

6. स्थानीय शासन

गांधी जी स्थानीय शासन को अधिक महत्व देते थे। उनका मानना था कि शहर में बैठे कुल लोग पूरे भारत के गांवों का भाग्य निर्धारित नहीं करते है। उनका मानना था कि लोग अपना शासन स्वयं सम्भाले तथा अपनी आवश्यकताओं को अनुसार नीति बनाएं। ग्राम सभा को वे स्थानीय प्रशासन की सबसे छोटी तथा सबसे मजबूत इकाई बनाना चाहते थे। 18 से 50 वर्ष का प्रत्येक व्यवस्क ग्राम सभा का सदस्य माना जाएगा। ग्राम सभा अपनी कार्यपालिका अर्थात् पंचायत चुनेगी। ग्राम सभा का कार्यकाल एक वर्ष का होगा। इस कार्यकाल के दौरान चुने हुए प्रतिनिधियों को वापस बुलाया जा सकेगा। ग्राम सभा आम जनता की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए सभी कार्य करेगी। वह कृषि कार्य, स्वच्छता तथा सुरक्षा सम्बन्धि कार्य करेगी। पंचायत का चुनाव गाँव के लोग करेंगे। इसका कार्यकाल एक वर्ष का होगा। गांधी जी का मानना था कि जो भी व्यक्ति पंचायत के लिए चुने जाएं, उनमें कुछ नैतिक गुण अवश्य हो। जैसे–वो समाजसेवी हो, ईमानदार हो, पद का लोलुप न हो, अपने विरोधियों के प्रति अहिंसक हो। पंचायत की शक्ति पर उन्होंने कुछ अंकुश भी लगाया था। पंचायत फौजदारी मुकदमा नहीं चला सकती थी। वह जुर्माना भी नहीं लगा सकती थी। गांधी जी ने गाँव के विकास और सेवा के लिए पंचायत को कई कार्य सौपे थे। जैसे–शिक्षा की व्यवस्था करना, गाँव की सफाई करना, छुआछूत का अंत करना, परस्पर बन्धुत्व की भावना का विकास करना।

आजादी के बाद संविधान में पंचायती राज व्यवस्था का प्रावधान किया गया। स्थानीय स्तर पर पंचायती व्यवस्था कार्यरत है। कुछ राज्यों में पंचायतों ने अच्छा कार्य किया है।

7. समानता

गांधी जी ब्रिटिश सरकार से समानता की प्राप्ति के लिए कई वर्षो तक संघर्ष किया था। वे ब्रिटिश सरकार के असमान व्यवहार व नीतियों से परिचित थे। इस लिए वह सबके लिए समानता की कल्पना करते थे। मेरी कल्पना के रामराज्य में राजा और रंक दोनों के अधिकारों को समान रूप से रक्षा की जाएगी।[23] समानता को वे इस प्रकार स्थापित करना चाहते थे कि सब का ध्यान रखते हुए, सबकी आवश्यकताएं पूर्ण हो जाए। उनके अनुसार–''समानता का तात्पर्य यह नहीं है कि हर एक के पास पाँच एकड़ भूमि होनी चाहिए और एक ही तरह के मकान और उतना ही गज कपड़ा होना चाहिए, परन्तु इसका अर्थ जरूर है कि प्रत्येक के पास रहने के लिए मकान, पहनने के लिए पर्याप्त वस्त्र और भोजन के लिए पर्याप्त अन्न होगा।[24] वर्ण–व्यवस्था के कारण भारतीय समाज मे व्याप्त अस्पृश्यता को वे अभिशाप मानते थे तथा उसे समाप्त करने के पक्ष में थे। गांधी जी के अनुसार–''उसने लगभग चार करोड़, मनुष्यों का विकास रोक रखा है। उन्हे जीवन की सामान्य सुविधायें भी नहीं दी जाती। इसलिए इस बुराई को जितनी जल्दी निर्मूल कर दिय जाय, उतना ही हिन्दू धर्म, भारत और शायद समग्र मानव–जाति के लिए वह कल्याणकारी सिद्ध होगा।[25] वे महिलाओं को भी हर क्षेत्र में समान अवसर देने के पक्ष में थे। उनके अनुसार–''स्त्री पुरूष की साथिन है, जिसकी बौद्धिक क्षमताएं पुरूष की बौद्धिक क्षमताओं से किसी तरह कम नहीं है।''[26] स्त्रियों के अधिकारों के सवाल पर मैं किसी तरह का समझौता स्वीकार नही कर सकता। मेरी राय में उन पर ऐसा कोई कानूनी प्रतिबन्ध नही लगाया जाना चाहिए, जो पुरूषों पर न लगाया गया हो। पुत्रों और कन्याओं में किसी तरह का भेद नही होना चाहिए। उनके साथ पूरी समानता का व्यवहार होना चाहिए।[27]

8. स्वतन्त्रता

गांधी जी ने अपना सारा जीवन स्वतन्त्रता की प्राप्ति के लिए लगा दिया। स्वतन्त्रता के लिए उन्होंने कई वर्षों तक संघर्ष व तपस्या की। स्वतन्त्रता के महत्व को स्वीकार करते हुए उन्होंने कहा है कि ''यदि व्यक्तिगत स्वतन्त्रता चली जाती है, तो निश्चित रूप से सब कुछ चला जाता है, क्योंकि यदि व्यक्ति किसी गिनती में नहीं रहता, तो समाज का फिर क्या बचता है? केवल व्यक्तिगत स्वतन्त्रता ही व्यक्ति को समाज की सेवा में स्वेच्छा से समर्थन करने के लिए प्रेरित कर सकती है। यदि उससे उसकी स्वतन्त्रता छीन ली गई तो वह यंत्र मात्र बन जाता है और समाज बरबाद हो जाता है।[28] परन्तु गांधी जी स्वतन्त्रता पर कुछ नियन्त्रण के भी समर्थक थे। उनके अनुसार–''सर्वोच्च कोटि की स्वतंत्रता के साथ सर्वोच्च कोटि का अनुशासन और विनय आवश्यक है। अनुशासन और विनय से मिलने वाली स्वतन्त्रता को कोई नही छीन सकता।''[29] उनका मानना था कि हम जैसी स्वतन्त्रता खुद के लिए चाहते है, वैसी ही स्वतन्त्रता की कामना हमें दूसरों के लिए भी करनी चाहिए। क्योंकि स्वतन्त्रता स्वयं की शक्तियों तथा क्षमताओं को बढ़ाने का एक अच्छा माध्यम है। गांधी जी के अनुसार–''हर एक मनुष्य को अपनी शक्तियों का इस तरह उपयोग करने की पूरी–पूरी स्वतन्त्रता होनी चाहिए कि जिससे उनके पड़ोसियों की वैसी ही स्वतन्त्रता में कोई बाधा न पड़े और उनकी उस स्वतन्त्रता के साथ उनकी स्वतन्त्रता रह सके। लेकिन उन शक्तियों से प्राप्त होने वाले लाभों का मनमाना उपयोग करने की किसी को भी अधिकार नहीं है।[30]

9. अधिकार तथा कर्त्तव्य

महात्मा गांधी सदैव देश हित में कार्य करने को तत्पर रहते थे। इसलिए वे अधिकारों की अपेक्षा कर्त्तव्यों पर अधिक जोर देते थे। उन्होंने राजा, आम नागरिक, कैदी, पूँजीपति वर्ग, वकील सबके कर्त्तव्यों के बारे में बताया है। गांधी जी के अनुसार–''जो व्यक्ति अपने कर्तव्य का उचित पालन करता है, उसे अधिकार अपने आप मिल जाते है, सच तो यह है कि एकमात्र अपने कर्त्तव्य के

पालन का अधिकार ही ऐसा अधिकार है, जिसके लिए मनुष्य को जीना चाहिए और मरना चाहिए। उसमें सब उचित अधिकारों का समावेश हो जाता है।[31] उन्होंने उस समय के राजाओं को सलाह रूप में कहा कि–''राजाओं का फर्ज है कि वे रिआया के सच्चे सेवकों की तरह काम करें। वे किसी बाहरी सत्ता के दिए हुए हकों के बल पर राज्य नहीं करेंगे और तलवार के जोर से तो कभी नहीं। वे सेवा से हासिल किये गये हक से और खुद को मिली हुई विशेष बुद्धि के हक से राज्य करेंगें।''[32] समाज में अमन तथा व्यवस्था कायम रखने के लिए कर्त्तव्यों का पालन आवश्यक है। उनके अनुसार–''अगर सब लोग सिर्फ अपने हकों पर ही जोर दे और फर्जों को भूल जाये तो चारों तरफ बड़ी गड़बड़ी और अंधाधुंधी मच जाय। अगर हर आदमी हकों पर जोर देने के बजाय अपना फर्ज अदा करे, तो मनुष्य जाति में जल्दी ही व्यवस्था और अमन का राज्य कायम हो जाय।''[33] उन्होंने जेल के कर्मचारियों को सुझाव दिया है कि वे कैदियों से अच्छा व्यवहार करें। गांधी जी के अनुसार–''जेल के कर्मचारियों की दृष्टि अस्पताल के डॉक्टरों और नर्सों जैसी होनी चाहिए। कैदियों को महसूस होना चाहिए कि जेल के अफसर उनके दोस्त है। अफसर वहाँ इसलिए है कि वे अपराधियों को फिर से दिमागी तन्दुरूस्ती हासिल करने में मदद करें।''[34] कैदियों को सलाह देते हुए कहा कि–''उन्हे जेल के अनुशासन तोड़ने से बचना चाहिए। जो भी काम उन्हें सौंपा जाय, उसमें उन्हे अपना दिल और आत्मा, दोनों लगा देना चाहिए।''[35] उन्होंने वकालत करने वाले व्यक्तियों को यह सलाह दी की वो इस पेशे को धन बटोरने के लिए नहीं करें। वे इसके माध्यम से देश की सेवा करें।

10. जनमत का महत्व

गांधी जी ने आम जनता को कभी भी कमतर नहीं माना। वे आम जनता के दृष्टिकोण को पर्याप्त महत्व देते थे। राज्य के लिए जनमत के अनुसार चलने के लिए वे आवश्यक मानते थे। गांधी जी के अनुसार–''जनता की राय के अनुसार चलने वाला राज्य जनमत से आगे बढ़कर कोई काम नही कर सकता। यदि व जनमत के खिलाफ हो जाये तो नष्ट हो जाय।''[36]

11. विपक्ष को महत्व

गांधी जी विपक्ष तथा अल्पमत का आदर करते थे। गांधी जी के अनुसार–''हमारे जैसे विशाल देश में ईमानदारी से विचार करने वाले सभी पक्षों को स्थान होना चाहिए। इसलिए हमारा अपने प्रति और दूसरों के प्रति कम से कम यह कर्त्तव्य तो है ही कि हम प्रतिपक्षी का दृष्टिकोण समझने की कोशिश करें और यदि हम उसे स्वीकार न कर सकें तो भी जिस तरह हम यह चाहेंगे कि वह हमारे मत का आदर करे, उसी तरह हम भी उसके मत का आदर करें। यह चीज स्वस्थ सार्वजनिक जीवन की और स्वराज्य की योग्यता की अनिवार्य कसौटियों में से एक है।''[37]

भारत छोड़ो प्रस्ताव के विरूद्ध 13 कम्यूनिष्ट सदस्यों ने मतदान किया था पर गांधी जी ने उनकी इस तरह तारीफ की–''मैं उन 13 मित्रों को बधाई देता हूँ, जिन्होने प्रस्ताव के विरूद्ध मतदान किया। ऐसा कर उन्होंने कोई ऐसा काम नहीं किया, जिसके लिए वे शर्मिन्दा हों। पिछले 20 साल में हमने यही सीखने की कोशिश की है कि हम अगर घोर अल्पमत में भी हो जाएँ और लोग हम पर हँस रहे हों, तब भी हम साहस न खोएँ। हमने इस आत्मविश्वास के साथ अपनी मान्यताओं पर दृढ़ रहना सीखा है कि हम सही रास्ते पर है। हिम्मत के साथ अपनी निष्ठाओं पर अडिग रहने का गुण अर्जित करना हमें शोभा देता है, क्योंकि इससे मनुष्य महान बनता है और वह अपने नैतिक कद को ऊँचा उठाता है। इसलिए मुझे यह देखकर खुशी हुई कि इन मित्रों ने उन सिद्धान्त को आत्मसात कर लिया है, जिसकी मैंने पिछले 50 वर्ष या उससे भी ज्यादा से अनुकरण करने की कोशिश की है।''[38]

महात्मा गांधी का राजनीतिक दर्शन आदर्शवादी है। वह इस प्रकार की राजनीतिक संरचना के समर्थक हैं, जो पूरी मानवता की सेवा कर सके। उनके राजनीतिक विचार वर्तमान समय में बहुत ही प्रासंगिक है। वर्तमान समय में बहुत सी राजनीतिक समस्याओं का कारण राजनीति में नैतिकता का घटना हुआ महत्व है। उनके विचारों को अपनाकर राजनीति तथा समाज की बहुत सी समस्याओं को दूर किया जा सकता है। उनका राजनीतिक दर्शन श्रेष्ठ राज्य तथा श्रेष्ठ नागरिक के निर्माण में सहायक है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. दत्त, धीरेन्द्र मोहन,(1973), महात्मा गांधी का दर्शन, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना, पृष्ठ संख्या–99.
2. यंग इण्डिया, 11–9–24.
3. पाण्डेय, उपासना,(2007), उत्तर–आधुनिकता और गांधी, रावत पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–216.
4. हरिजन सेवक, 10–02–1940.
5. हिन्दी नव जीवन, 30.11.1940.
6. मीना, जनक सिंह, (2020), वर्तमान युग में गांधीवादी चिंतन की प्रासंगिकता, लोक प्रशासन, भारतीय लोक प्रशासन संस्थान, नई दिल्ली, खण्ड–12, अंक–2, जुलाई–दिसम्बर, पृष्ठ संख्या–51.
7. Gandhi, M.K. (1953) My Religion, Novajivan Publishing House, Ahmedabad, P-3.
8. सिंह, राम जी, (2017),गांधी–दृष्टि, अर्जुन पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–15.
9. सिंह, राम जी, (2009), गांधी और मानवता का भविष्य, कॉमनवेल्स पब्लिशर्स, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–152.
10. गांधी, महात्मा, (2002), हिन्दी स्वराज्य, सर्व सेवा संघ प्रकाशन राजघाट, वाराणसी, पृष्ठ संख्या–63–64.
11. दत्त, महेश्वर (डॉ0),(2003), गांधी का पंचायती राज, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–12–13.
12. वही, पृष्ठ संख्या–13.
13. हरिजन, 2–1–37.
14. यंग इंडिया, 6–8–24.
15. यंग इंडिया, 5–3–31.
16. वही, 26–3–31.
17. हरिजन, 27–5–39.
18. दत्त, महेश्वर (डॉ0),(2003), गांधी का पंचायती राज, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–17.
19. वही, पृष्ठ संख्या–17.
20. वही, पृष्ठ संख्या–19.
21. वही, पृष्ठ संख्या–19.
22. त्यागी, रूचि, (2020),सर्वोदय एवं गांधी जी के राज्य प्रशासन सम्बन्धी दृष्टिकोण, लोक प्रशासन, भारतीय लोक प्रशासन संस्थान, नई दिल्ली, खण्ड–12, अंक–2, जुलाई–दिसम्बर, पृष्ठ संख्या–58.
23. गांधी, सर्वोदय, पृष्ठ संख्या–106.
24. हरिजन सेवक, 17.08.1940, पृष्ठ संख्या–225.
25. हरिजन सेवक, 11.2.33
26. स्पीचेज़ एण्ड राइटिंग्ज ऑफ महात्मा गांधी, पृष्ठ संख्या–424.
27. यंग इंडिया, 17.10.29
28. हरिजन, 1.2.1942, पृष्ठ संख्या–27.

29. यंग इंडिया, 3.5.1936
30. हरिजन सेवक 2.8.1942, पृष्ठ संख्या–237.
31. हरिजन, 27/05/1939
32. हरिजन सेवक, 6.7.47
33. वही, 6.7.47
34. दिल्ली–डायरी, पृष्ठ संख्या–117–118.
35. वही, पृष्ठ संख्या–117–118.
36. यंग इंडिया, 30.7.31
37. यंग इंडिया, 14.4.24
38. चन्द्र, बिपिन, (1999), भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–413.